।। ओ३म् ।।

प्रभु से विनय

हे माता ! जब यह हृदय तेरी भावुकता से ऐसा परिपक्व हो जाता है जैसे सूर्य की किरणों से यह संसार प्रकाशमान हो जाता है तो ऐसे ही तेरी ज्ञान रूपी किरणों से हमारा हृदय प्रकाशमान हो जाता है। मलविक्षेप दूर हो जाते हैं। उस समय हम अपने उस प्रतर भूषणम् अग्नि की आराधना करते हुए अपनी आत्मा को पवित्र बनाते हैं। अहा ! तू वास्तव में हमारी आत्मा को पवित्र करने वाली है।

संगति भूषणं मृत्यन्नताः देवं दध्मः।
वर्चे निरच्चता वाप्नोति देवं पा पश्यत।।

हे माता ! जब हम तेरा अनुकरण करते हैं, तेरी महानता की आराधना करते हैं तो उस समय हमारे हृदय में जो नाना प्रकार के पाप हैं वह सब भस्म हो जाते हैं जैसे अग्नि ईन्धन को नष्ट कर देती है।

अगृणी भूषणं पवनाति देवं मा मा वेतु।
कामश्चते वेतु न राजन्नः हृदये कामा वेतु माः।।

हे माता ! हम संसार में आपके सिवाय किसी को नमस्कार न करें। केवल नमः हो तो आपके लिये क्योंकि आप हमारे अधिराज हैं 'पापनोति' पापी को नष्ट करने वाले हैं, हम आप को ही नमस्कार करते हुए आपकी शरण में रहें, हृदय में वाणी में हर समय हम आपका उच्चारण करते रहें, आपकी आनन्दमयी ज्योति में रमण करते रहें।

स्वस्ति ब्रह्मण गच्छाति हृदये वासंगति न जहां।
याचन्नतो भवनाति ब्रह्मणा गच्छते रेवं पमीनाः।।

हे माता ! हम तुझे बारम्बार पुकारते चले जा रहे हैं, तू हमारे पापों को नष्ट कर और ऐसा पवित्र बना कि हम संसार में जन्म लेते हुए यौगिकता को प्राप्त करते रहें। तेरे गर्भ में आयें और अपने हृदय को ऐसा पवित्र बनाते रहें जिससे तेरी गोद में तेरी शरण में आ सकें। हमें अपने से दूर न कर, यदि हम तेरे से दूर हो गये तो हमारा जीवन व्यर्थ होता चला जायेगा, हमारे जीवन में न प्रीति रहेगी न आनन्द रहेगा। यदि हमारे हृदय में आपकी ज्योति रहेगी तो हम संसार को ज्योतिष्मान् कर सकते हैं अन्यथा हमारा जीवन अन्धकार में डूबता रहेगा।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अँक : 516	कुल पृष्ठ संख्या	समग्र अँक : 591
वर्ष : 43	40	समग्र वर्ष : 50

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2.	अनुक्रम		4
3.	उन्नति के आधार	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-16
4.	विवेक	पूज्यपाद-गुरुदेव	17-29
5.	ऋषियों के उद्‌गार	पूज्यपाद-गुरुदेव	30
6.	Conception of Yajna	Pujyapad Gurudev	31-35
7.	दान, पुस्तकों की सूची, प्राप्ति के स्थान व सूचना आदि		36-39

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्मोत्सव

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज, आदि गुरु ब्रह्मा जी के परम प्रिय शिष्य का 73वाँ जन्मोत्सव दिनाँक 29 सितम्बर से 30 सितम्बर, 2015 तक गुरुदेव की कर्मभूमि एवम् निर्माणीत यज्ञीय स्थली लाक्षागृह बरनावा में सामवेद ब्रह्म पारायण महायाग के आयोजन द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति बड़े हर्षोल्लास के साथ श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.) द्वारा मनाया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

उन्नति के आधार

जीते रहो!

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम पुनः की भाँति कुछ वेदमन्त्रों का पाठ कर रहे थे। मैंने आज से पूर्व कई स्थलों में कहा है कि **इस समय हमारे पिप्पलाद मुनि सँहिता के मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है** और यह भी कहा था कि हमारे भिन्न-भिन्न ऋषियों ने अपनी-अपनी विचारधाराओं से मूल चार वेदों की 1127 सँहितायें (शाखायें) बनाईं।

समस्त विद्याओं का भण्डार

वास्तव में वेद नाम प्रकाश का है, जो मनुष्य के लिए, संसार के लिए, राष्ट्र के लिए, मेरी प्यारी माताओं के लिए और ऋषि मण्डल सबके लिए ही अज्ञानता को नष्ट करने वाली है। आज कौन सी ऐसी विद्या है जो वेदों में नहीं है। जिस प्रकार परमात्मा ने सृष्टि और इस पृथ्वी को रचा जिसमें नाना धातुएँ हैं, स्वर्ण हैं, नाना सोमलताएँ हैं परन्तु सूर्य की किरणें प्रकाश देती हैं और उसी प्रकाश से वह वस्तु वैसी ही प्रतीत देती है इसी प्रकार वेद में सब विद्याएं हैं। माता अपने पुत्र को कैसे उत्पन्न करती है? ऋतु काल कैसे आता है, कौन सा नक्षत्र होता है? कैसा आहार और व्यवहार होता है? यह सब कुछ विद्याएँ हमारे वेद में हैं। हे प्रभु ! तूने हमारे कल्याण के लिए यह अनुपम विद्याएँ दी हैं। वेदगान गाते समय मेरा हृदय मग्न होता जा रहा था, आपकी महिमा का गुणगान कहाँ तक गाता चला जाऊँ।

मेरे आदि ऋषियों का एक बड़ा प्रसंग चला करता है, मेरे प्यारे महानन्द जी ने भी प्रश्न किया कि जब माता के गर्भ में हमारी रचना होती है जो कमल तुल्य बड़ा कोमल है तो सृष्टि के प्रारम्भ में जब

यह माता नहीं थी तो मनुष्य कैसे उत्पन्न हो गया? इसमें नाना विचारधाराएँ हैं जैसा मैंने पूर्व निर्णय कराया परन्तु **मैं तो एक वाक्य कहा करता हूँ कि मनुष्य का निर्माण ऋषि-मुनियों के द्वारा हुआ।**

मुनिवरो ! जिस प्रकार भौतिक वैज्ञानिक उन तत्त्वों को जान लेता है जिनमें परमाणु, त्रिसरेणु और महात्रिसरेणु होते हैं और उन्हें एकत्रित कर यन्त्रों का आविष्कार कर लेता है इसी प्रकार सृष्टि के आरम्भ में ऋषि आत्माएँ जो पूर्व रची हुई सृष्टि में थीं और उनके द्वारा वह विद्याएँ थीं, उन्होंने पूर्व कथित सृष्टि थी (की) और उनके द्वारा वह विद्याएँ थीं, उन्होंने पूर्व रचित सृष्टि के आधार से उन परमाणुओं को एकत्रित किया और मनुष्य जाति उत्पन्न हो गई, यह बड़ा गूढ़ विषय है, आज समय आज्ञा नहीं दे रहा है किसी काल में इनका निर्णय करेंगे।

मुनिवरो ! वाक्य चल रहा था कि हमारे वेद में कौन सी विद्या नहीं परन्तु आज इस विद्या को मन्थन करने की आवश्यकता है, अपने जीवन में ओत-प्रोत करने की आवश्यकता है, यह विद्या सहज प्राप्त नहीं होती। यह वह अनुपम विद्या है जिसको भगवान् राम ने अपने जीवन में धारण किया और पर्वतों की शय्या बनाकर अपनी संस्कृति का पालन किया।

वेदवाणी हमें विरक्त बनाती है, इससे मनुष्य मात्र से प्रेम हो जाता है, वेदवाणी यह नहीं कहती है कि आज तुम एक-दूसरे के रक्त के पिपासु बन जाओ, वेदवाणी कहती है कि भौतिक, आध्यात्मिक ज्ञान को जानो और इस मन को छुटकारा मत दो, जब यह मन छुटकारा पा जाएगा उस समय यह तुम्हारी मृत्यु का सामना करने लगेगा इसलिए तुम्हें विचारना है और वेद के उस अनुसन्धान पर जाना है जहाँ पहुँचकर हमारे ऋषि संसार में ऋषि-मुनि कहलाए।

कैलाशपति शिव

मुनिवरो ! आज मुझे राष्ट्र का निर्णय करते हुए महाराजा शिव की चर्चाएँ स्मरण आती हैं जिनका संस्कार राजा हिमाचल की कन्या पार्वती द्वारा हुआ। महानन्द जी ! तुमने महाराजा शिव को देखा होगा जो कैलाश पर्वत पर तपस्या किया करते थे, कैसे विलक्षण थे वह।

मुनिवरो ! कौन से राजा का नाम शिव है और कैलाशपति क्यों कहते हैं?

अरे ! कैलाश कहते हैं प्रजा को और पति कहते हैं प्रजा के स्वामी को, जिस प्रकार कैलाश पर्वत बहुत ऊँचा होता है इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है उस प्रजा को कैलाश कहते हैं और उसके पति को हमारे यहाँ शिव कहते हैं।

शिव की व्याख्या

शिव नाम परमात्मा का भी है और शिव नाम इस आत्मा का भी है। आज हमें पुनः पुनः विचारना है और महाराजा शिव की शरण में चले जाना है जो संसार का रचियता और स्वामी है, जो लिंगमय संसार को धारण कर रहा है। आज हम उस लिंगमय ज्योति वाले शिव की याचना करते चले जाएँ जिसने आज महत् देकर इस संसार को विलक्षण बनाया है।

मुनिवरो ! शिव नाम उस द्रव्यपति का भी है जो अपने द्रव्य को यथाशक्ति संसार के शुभ कार्यों में लगाता है, राष्ट्र के कार्यों में लगाता है, रक्षा के कार्यों में लगाता है और धर्म कार्यों में लगाता है। उस द्रव्य का भी लिंगमय ज्योति कहा जाता है।

शिवलिंग की कथा का रहस्य

मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक लोक कथा वर्णन कराई और इन्होंने ऐसा कहा कि जिस समय महाराजा शिव नग्न होकर ऋषि पत्नी के द्वारा पहुँचे तो ऋषियों ने शाप दिया कि तेरा लिंग पृथ्वी में स्थापित हो जाए, यह पृथ्वी में स्थापित हो गया और अपनी क्रीड़ा करने लगा तीनों लोकों में त्राहिमाम् त्राहिमाम् मच गया, देवताओं ने याचना की तो देवताओं ने कहा कि तुम पार्वती की याचना करो, वह अपनी ''भगः लिंगों धारणों अचेत'' करके इसको शान्त कर देगी।

मुनिवरो ! इस वाक्य पर जब दार्शनिक रूप लिया जाता है तो मेरा हृदय गदगद हो जाता है। शिव नाम परमात्मा का है और पार्वती

नाम प्रकृति का है, प्राण नाम लिंग का है। जब संसार में यह प्राण बिना प्रकृति के आता है तो यह त्राहिमाम्-त्राहिमाम् कर देता है जैसे मनुष्य के शरीर में जब अपान और प्राण दोनों की एक गति हो जाती है तो मानव मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, त्राहिमाम्-त्राहिमाम् हो जाती है। इसी प्रकार जब प्राण रूपी लिंग इस संसार में बिना प्रकृति के आता है तो त्राहिमाम्-त्राहिमाम् मच जाता है, देवता उस समय याचना किया करते हैं कि हे माता पार्वती ! तू आ, उस समय यह प्रकृति माता पार्वती आती है, भग नाम इस प्रकृति का है वह लिंग रूपी प्राण को अपने में धारण कर शान्त किया करती है।

मुनिवरो ! जैसे आयुर्वेद के महान् आचार्य जब प्राण और अपान दोनों की सन्धि हो जाती है तो कोई औषधि व सोमलता देकर प्राणों को पृथक करता है और उसको यथार्थ गति पर लाता है इसी प्रकार प्राण को प्रकृति धारण करती है तो सृष्टि प्रारम्भ हो जाती है इस प्रकार जो सृष्टि को प्रारम्भ करता है उसका नाम शिव है, हे परमात्मन् शिव ! तू माता पार्वती सहित आकर इस संसार का कल्याण कर।

मुनिवरो ! त्रेताकाल में माता पार्वती उसका नाम भी था जो राजा हिमाचल की कन्या थी, मुझे उसको देखने का सौभाग्य मिला। आज इस सम्बन्ध में अधिक उच्चारण करने का समय आज्ञा नहीं दे रहा है और आज का वाक्य भी कुछ और है।

मुनिवरो ! शिव नाम इस आत्मा का भी है। जब मनुष्य शिव संकल्प धारण करता है और शिव का पुजारी बनता है तो उस समय यह आत्मा अपने प्रभु शिव को पाकर 'शिव' कहलाता है। जिस प्रकार राजा अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने से शिव कहलाता है ऐसे ही यह आत्मा उस प्रभु की गोद में जाने से शिव कहलाता है। मैंने इससे पूर्व कहा है कि एक शिव होता है और द्वितीय महा शिव होता है, यह आत्मा महा शिव नहीं होता केवल शिव कहलाता है।

मुनिवरो ! यह है आज शिव की व्याख्याएँ, मुझे शिव की अधिक व्याख्या उच्चारण नहीं करनी है। आज हमें केवल यह विचारना है कि

हमारे वेदों में वह अनुपम विद्या वह दार्शनिक विचार हैं जिनको धारण करता-करता मानव गदगद हो जाता है परन्तु हमारी बुद्धि की सूक्ष्मता है, हम बुद्धि को संकुचित बना लेते हैं, बुद्धि से इस वेद वाणी का विस्तार नहीं लेते वेद में शिव के नाना मन्त्र आते हैं।

आर्य की परिभाषा

मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे वर्णन कराया कि आधुनिक काल में धर्म के सम्बन्ध में बहुत विवाद हैं, मुझे कुछ ऐसा वर्णन मिला है। श्रेष्ठ पुरुषों को हमारे यहाँ आर्यता प्रदान की जाती है जो श्रेष्ठ पुत्र कहलाता है, सच्चा सनातन कहलाता है। अहा ! दुराचारी को श्रेष्ठ आर्य पुरुष नहीं कहते परन्तु उस परम्परा वाले को, वैदिक विचार वाले को, वैदिक ज्ञान-विज्ञान वाले को हमारे यहाँ आर्य की उपाधि प्रदान की जाती है, आज हमें सच्चा सनातन बनना है। अरे सच्चे सनातन के धारण करने वाला वेद के महापण्डित तुझे धन्य है यदि तू आज दार्शनिक बनता है और तेरे विचार संसार में ओत-प्रोत होते हैं, राष्ट्र तक पहुँचते हैं यदि राजा तक पहुँचते हैं तो वह राजा भी धन्य है।

माताओं को प्रेरणा

मुनिवरो ! वाक्य चल रहा था मेरी प्यारी माताओं के सम्बन्ध में। मेरी प्यारी माता तू संसार में एक वीर बालक को उत्पन्न कर, तू संसार में क्रीडा करने वाले कीड़ों को न उत्पन्न कर, आज तू केवल भगवान् राम जैसा एक वीर उत्पन्न कर।

आज भगवान् राम के समय को लगभग 8,50,662 वर्ष हो गए हैं परन्तु आज भी हम उनका नाम उच्चारण करते चले जा रहे हैं क्योंकि वह एक माता का पुत्र है।

भगवान् राम जैसों को ही नहीं माता ! तू महर्षि अत्रि जैसों को उत्पन्न कर, महर्षि को लगभग करोड़ों वर्ष हो चुके हैं परन्तु उनका नाम अब तक उच्चारण किया जा रहा है। महर्षि वशिष्ठ जैसों को उत्पन्न कर। यह कैसे उत्पन्न होते हैं यह वेद में विद्या है, यदि मेरी प्यारी

माता ! तू ऐसे पुत्र को उत्पन्न करने वाली बन जाए तो इस संसार का कल्याण हो जाए और यह संसार विलक्षण बन जाए।

श्रेष्ठ सन्तान

मुनिवरो ! मैंने पूर्व काल में नक्षत्रों का वर्णन किया। मेरी प्यारी माता जब परमात्मा के नियम के अनुकूल ऋतु काल स्पष्ट हो जाए उस समय तू यज्ञवती हो, उस समय जब तेरी सोलहवीं अररुत सोलहवीं रात्रि आये तू अपने पति के द्वारा 'ऋतुगाम' बन कर श्रेष्ठ बालक को उत्पन्न कर परन्तु तेरे द्वारा वेद की अनुपम विद्या होनी चाहिए। जिस समय सोलहवीं रात्रि को जेठा नक्षत्र हो, और यदि उस काल में तेरे बालक का गर्भ स्थापन हो गया तो निश्चित है कि वह जो बालक होगा वह संसार का वीर बालक कहलायेगा। इस विद्या को जान लेने की आवश्यकता है।

यदि ग्यारहवीं रात्रि हो अथवा बारहवीं रात्रि हो और उस समय पूखा नक्षत्र हो तो निश्चित है कि उस माता के गर्भस्थल से दैत्य बालक उत्पन्न होगा। मुनिवरो ! आज हमें इन नक्षत्रों का ज्ञान होना चाहिए। मेरी प्यारी माताओं को इस विद्या को धारण करने की आवश्यकता है, यह सब विद्या वेदों में प्राप्त होती है, आज मुझे इन नक्षत्रों की गणना कराने की व इनके पूर्ण विज्ञान को वर्णन करने का समय नहीं, यदि समय मिलता रहेगा तो वर्णन करता रहूँगा।

मुनिवरो ! **पति और पत्नी का संसार में संस्कार होने का क्या उद्देश्य है?** वह उद्देश्य यह है कि अथिति सेवा करो, द्रव्य और सम्पत्ति का सदुपयोग करो, वेद की विद्या के आधार से पर्जन्य नाम के ब्रह्मचारी बन करके सन्तान उत्पन्न करना तुम्हारा मुख्य उद्देश्य होता है।

मुनिवरो ! मेरे पूज्य गुरुदेव से जब मैंने प्रश्न किया तो कहा कि मेरी प्यारी माताओं को नक्षत्रों का ज्ञान होना चाहिये और जब गर्भ स्थापित हो जाए उस समय माता भजन और वेद पाठ करने वाली बनें। ब्रह्मचर्य धारण करके अपने मन को नियंत्रण में करे, जिस प्रकार के मन में संकल्प व विचार धाराएँ होंगी उनके अनुकूल ही पुत्र उत्पन्न होगा। नाना तुच्छ भावनाओं को त्याग करके माता गायत्री की गोद में

पहुँच कर गर्भस्थल में रहने वाली सन्तान चाहे कन्या हो या पुत्र हो, वह गायत्री बालक तेरे गर्भ से अवश्य उत्पन्न होगा।

गायत्री

गायत्री नाम है गाने का। जो गान प्रभु के निकट ले जाने वाला हो उसको गायत्री कहते हैं जैसे मैं अभी-अभी पर्यटण समय में जटा पाठ कर रहा था। जटापाठ, धनपाठ, माला पाठ, मधु पाठ, विसर्ग पाठ और नाना प्रकार के पाठ हैं, ज्यों-ज्यों मुझे समय मिलता रहेगा त्यों-त्यों मैं सबको उच्चारण करके तुमको वर्णन करूँगा, मुझे समय की बहुत सूक्ष्मता रहती है।

गायत्री उसको कहते हैं जो संसार का कल्याण करती है, जिसमें संसार समाहित है उस गायत्री का नाम माता है, जिस गायत्री में तीन प्रकार की व्याहृतियाँ हों उसका नाम गायत्री है।

मेरी प्यारी माता ! इसी प्रकार वेदों ने तुझे माता कहा है, तेरे जीवन में भी तीन व्याहृतियाँ हैं, सबसे ऊँची व्याहृति यह है कि तू बालक का पालन-पोषण करती है, द्वितीय व्याहृति यह है कि तू अपने बालक को राष्ट्र का और संसार का विचित्र बालक बनाती है और तृतीय व्याहृति यह है कि तेरे में संसार के कल्याण की भावनाएँ होती हैं, अपने पुत्र को ऊँचा बनाने की नहीं परन्तु संसार के पुत्रों को ऊँचा बनाने की जब तेरे में भावनायें होती हैं तो माता ! तेरा मानवत्व ऊँचा कहलाता है, इसलिए हे मेरी प्यारी माता ! वेदों ने तुझे गायत्री कहा है।

गर्भवती माता का आहार

हे मेरी माता ! जब तेरे गर्भस्थल में बालक हो और यदि तू उस समय किसी जीव का भक्षण करती है तो तू आज अपने उस गर्भ के बालक की आत्मा की आत्महत्या करने वाली है, यदि आज तुझे वेद को लाना है तो कोई अशुद्ध आहार न कर, किसी जीव का भक्षण न कर, उन पदार्थों को पान न कर जो रसना को प्रिय लगे। यह गर्भस्थल में रहने वाले बालक के लिए घातक हैं।

हे माता ! तुझे आज बहुत कुछ विचारना है, तुझे अपने बालक को वास्तव में कमल उत्पन्न करना है। जैसा विष्णु की नाभि से ब्रह्म का जन्म होता है इसी प्रकार हे माता ! तेरे गर्भ रूपी कमल से यहाँ ऋषियों का जन्म होता है परन्तु उन माताओं से जो इस वैदिक विज्ञान को जानती हैं और मनोमय विज्ञान को जाना करती हैं और इन तीन व्याहृतियों पर विचार किया करती हैं और इन तीन व्याहृतियों पर विचार किया करती हैं। जब माता श्रेष्ठ होती है तो पुत्र भी श्रेष्ठ होते हैं, ऋषिता भी आती है, पवित्रता भी आती है और मानवता भी आती है।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे आधुनिक संसार का वर्णन कराया और कहा कि आज राजा और प्रजा सब ही चिन्तित हैं, एक-दूसरे को नष्ट करने की भावनाएँ हैं, राष्ट्र में भ्रष्टाचार का कोई अन्त नहीं परन्तु मुझे इसके ऊपर कोई व्याख्या नहीं करनी केवल यह कि यदि भ्रष्टाचार को समाप्त करना है तो मानव को और मेरी प्यारी माताओं को, मेरे प्यारे भद्र मण्डल लोक और ऋषि मण्डल को अपने स्वार्थ को त्याग करके निस्वार्थी बन जाना है, धर्म और अपनी मानवता के लिए अपने जीवन को न्यौछावर कर देना है।

यज्ञमय जीवन के लिए प्रेरणा

आज जीवन की बलि यह नहीं कि अपने प्राणों को शान्त कर दो, आज तुम्हारे द्वारा जितने अवगुण हैं इन सबको देव यज्ञ करके उसमें आहुति दे दो, जिस प्रकार योगीराज अपने नाना प्रकार के विचारों की आहुति देते हैं, इसी प्रकार आज हमें विचारों की आहुति देनी है जैसे अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है इसी प्रकार आज हमें अपने विचारों को शुद्ध कामनाओं के द्वारा और वेद रूपी ज्ञानाग्नि में अपने अशुद्ध विचारों की शुद्ध विचारों का संकल्प धारण करते हुए उनकी आहुति दे देनी है, जब आहुति चली जाएगी तो अग्नि प्रचण्ड हो जाएगी, जिसको कोई न छू सकेगा संसार में।

मुझे एक समय महर्षि लोमश ने वर्णन कराया कि मैंने अपनी माता की बड़ी उच्च सेवाएँ कीं और मेरी माता ने मुझे एक आदेश दिया

कि बेटा ! तुम्हारी इतनी दीर्घ आयु होनी चाहिए कि जितने मेरे शरीर पर यह केश हैं। परन्तु जब हम वेदों में और शास्त्रों में जाते हैं तो ध्यान आता है कि यहाँ तो इतनी आयु ही नहीं है, परन्तु मुनिवरो ! माता ने यह इसलिए कहा था कि बेटा ! तेरा नाम इतने वर्षों तक अमर रहे जितने मेरे शरीर पर यह केश हैं, यदि मेरे गर्भाशय को ऊँचा और पवित्र बनाना है, हे पुत्र ! तू यज्ञ पर चल।

प्रभु से महान् आत्माओं के लिए याचना

मेरे प्यारे महानन्द जी जब आधुनिक काल की चर्चा करते हैं तो मैं परमपिता परमात्मा से कहा करता हूँ कि हे परमात्मन् ! यदि आपने वेद संसार के कल्याण के लिए रचा है तो प्रभु ! इस आधुनिक काल में एक भगवान् कृष्ण जैसा, भगवान् राम जैसा उत्पन्न कर जिससे तेरे वेद की रक्षा हो, तेरे ज्ञान-विज्ञान की रक्षा हो। प्रभु उन आत्माओं को संसार में प्रेरित कर जो दैत्यों को नष्ट कर देवताओं की रक्षा करने वाले हों, हे परमात्मन् ! मेरी उन माताओं को उत्पन्न कर जो कारागार में रह कर प्रभु से याचना करने वाली कौन? मुनिवरो ! देखो जिसको हमारे यहाँ माता यशोदा भी कहते हैं और माता देवकी भी। जो महान् कंस के अत्याचारों से कारागार में है और माता यशोदा बालक का पालन कर रही है। आज उन महान् आत्माओं की आवश्यकता है जो दैत्यों को नष्ट करने वाली हों।

प्रभु ! हम यह उच्चारण नहीं कर रहे हैं कि आप मनुष्य बन कर आइये परन्तु उन आत्माओं को प्रेरित करें जो परम्परा से यहाँ चली आ रही हैं और संसार का कल्याण कर देती हैं वह यहाँ तेरी वेद वाणी का प्रसार करके उसी स्थान को रमण कर जाती हैं जहाँ से वह आत्मा आती हैं, प्रभु ! हमारी याचना को स्वीकार कर और वह आत्मा अवश्य उत्पन्न कर। यदि ऐसा न हुआ तो तेरे बनाये हुए विधान की, तेरे शिष्यों के बनाये हुए विधान की, मनु महाराज के विधान की और आपकी वेद वाणी की रक्षा न हो सकेगी।

मेरे प्यारे ! आज हम जिज्ञासु बनकर प्रभु से विनोद कर रहे हैं, प्रभु से संघर्ष कर रहे हैं, जो आत्मा प्रभु से संघर्ष करती है वही आत्मा भगवान् कृष्ण का रूप धारण कर लेती है और संसार का कल्याण कर देती है इसलिये आज हमें विचारना चाहिए और प्रभु से संग्राम करने वाला बनना चाहिए।

अरे! प्रकृति से संग्राम करने वाले क्यों बनते हों, परमात्मा से संग्राम कर देखो जिससे मानव का कल्याण होता है और देव स्थिति उत्पन्न होती है।

बेटा ! वाक्य उच्चारण करते-करते बहुत दूर चले गए हैं, आज का आदेश यह है कि मेरी प्यारी माताओं को, मेरे प्यारे भद्र मण्डल को ऋषि बनाना है, मेरी प्यारी माताओं को माता कौशल्या और माता देवकी बनना है, अपने विचारों में उन वस्तुओं को लाना है जिससे हमारी इस आत्मा का कल्याण हो, सामाजिक कल्याण और राष्ट्र कल्याण हो। आज हमें यह भी विचारना है कि जिस प्रकार ऋषिजन अपनी आत्मा के ज्ञान और विज्ञान के लिए अपने नाना कुविचारों की ज्ञानाग्नि में आहुति देते हैं और उन्हें भस्म कर देते हैं इसी प्रकार आज हमें भी अपने कुविचारों को भस्म करना है।

कागभुषुण्ड जी

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय कहा कि काग भुषुण्ड पक्षी थे, मैं इस वाक्य को पूर्व भी कह चुका हूँ कि काग पक्षी भी है परन्तु काग भुषुण्ड नाम के ऋषि भी हुए हैं।

मुनिवरो ! जो कागा की भाँति वाक्य उच्चारण करने वाला हो वह कागा कहलाया है, कागा चंचल वृत्ति से रहता है इसी प्रकार ही वाक्य उच्चारण करने वाला और जो ऋषि केवल चंचल वृत्ति से रहता है वह कागा ऋषि कहलाता है। परन्तु जब वह अपने विचारों पर, अपनी वाणी पर नियन्त्रण करके संसार के ज्ञान-विज्ञान को जान लेता है उसको काग भुषुण्ड ऋषि कहते हैं।

मेरे आदि ऋषि मण्डल ! अब समय मुझे अधिक आज्ञा नहीं दे

रहा है, कुछ सूक्ष्म सा आदेश प्रकट करता हुआ अपने वाक्यों को समाप्त करने जा रहा हूँ। मुझे एक वाक्य स्मरण आ चुका है कि आज का मनुष्य संसार कैसा है।

महात्मा विदुर और धृतराष्ट्र सम्वाद

मुनिवरो ! द्वापरकाल में एक समय महात्मा विदुर महाराज धृतराष्ट्र के द्वार पहुँचे। महाराजा धृतराष्ट्र ने उनका ऊँचा स्वागत किया और कहा कि हे महात्मा विदुर ! मुझे वर्णन कराइये कि **आज का संसार कैसा है?**

महात्मा विदुर बोले कि महाराज ! आज का संसार बड़ा विलक्षण है। यह एक भयँकर वनमय है जहाँ भयँकर अग्नि प्रज्वलित है और सिंह व हाथी अपनी ध्वनि कर रहे हैं। मनुष्य इन्हें विचारता है तो वहाँ से भयभीत होकर तीव्र गति से अपने स्थान को आने लगता है और उस वृक्ष पर आ जाता है जो जलाशय के तट पर है। यहाँ देखता क्या है कि जलाशय से एक सर्प उसके निकट आता चला जा रहा है। उस सर्प से भयभीत होने लगता है और देखता क्या है कि जिस वृक्ष पर विराजमान है उस वृक्ष को छः मुखों वाला हाथी निगलता चला जा रहा है और इस हाथी को भी एक सफेद वर्ण वाला और द्वितीय काल वर्ण वाला चूहा उस हाथी को काटते चले जा रहे हैं। और आगे और गम्भीरता से देखता है तो क्या? कि जिस वृक्ष पर वह विराजमान है उस पर मधु छत्ता है और मधु गिर रहा है मनुष्य उसके आनन्द में मग्न है। महाराज ! यह है आज के संसार का मनुष्य।

महाराज धृतराष्ट्र ने कहा कि इसको मुझे अच्छी प्रकार वर्णन कराइए। इसका स्पष्टीकरण करते हुए विदुर ने कहा कि जब मनुष्य माता के गर्भस्थल में रहता है तो वह भयँकर वन में है जहाँ प्राण रूपी हाथी अपनी ध्वनियाँ कर रहे हैं और प्राण रूपी अग्नि प्रज्वलित हो रही है। उस समय यह मनुष्य प्रभु से याचना करता हुआ इस संसार-सागर रूपी वृक्ष पर आ जाता है, इसके पश्चात् वह देखता है कि सर्प रूपी मृत्यु उसके निकट चली आ रही है और गम्भीरता से देखता तो क्या? कि छः मुखों वाला हाथी इस वृक्ष को निगलता चला जा रहा है।

वह छः मुखों वाला हाथी एक वर्ष है जिसमें छः ऋतुएँ—वसन्त, ग्रीष्म वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर हैं जो इस संसार रूपी वृक्ष को निगलता चला जा रहा है। और गम्भीरता से देखता क्या है कि इस छः मुख वाले हाथी को श्वेत व काले वर्ण वाले दो चूहे काटते जा रहे हैं यह श्वेत व काले वर्ण वाले चूहे दिन और रात हैं। इसके पश्चात् और भी गम्भीरता से देखता है, काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह रूपी मधु छत्ता है जिस छत्ते के आनन्द में यह मनुष्य मृत्यु को भूल बैठा है।

मेरे प्यारे ऋषि मण्डल ! मेरे प्यारे भद्र मण्डल ! आज मानव को ऊँचा बनना है, इस मधु रूपी छत्ते को शान्त करना है। मृत्यु जो शनैः शनैः तुम्हारे निकट आ रही है इससे बचने के लिए तुम्हें ज्ञान रूपी प्रकाश को पाना है।

बेटा ! अब यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, अब वेदों का यह पाठ होगा इसके पश्चात् वार्ता समाप्त हो जाएगी। आज का हमारा आदेश आत्मिक उन्नति, सामाजिक उन्नति और राष्ट्र उन्नति को लेकर था, कल समय मिलेगा तो शेष वार्ता कल होगी।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! कल का विषय क्या रहेगा?

महानन्द जी कल का कल देखा जाएगा, जैसा समय आएगा वैसा देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जी — देख लो भगवन् ! जैसी आपकी इच्छा, अब ही वर्णन कर देते।

महानन्द जी ! कल समय मिलेगा तो हम पितर लोक की चर्चा करेंगे। पितर किसको कहते हैं और किन-किन लोकों में रमण करते हैं। अब वेदों का पाठ होगा।

दिनाँक : 21 अप्रैल, 1964

स्थान : आर्य समाज कोटली बक्शीनगर, जम्मू

।। ओ३म् ।।

विवेक

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा कि आज भी पुनः की भाँति जटा पाठ में वेदमन्त्रों का पाठ किया। **इस समय हमारा महर्षि पिप्पलाद मुनि सँहिता के मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है** जिसमें परमात्मा का ज्ञान विज्ञान और मानव को पवित्र बनाने वाला एक अमूल्य प्रकाश है। इसको प्राप्त करने के लिए हमारे ऋषि-मुनियों, ने वेदाचार्यों ने महान् परिश्रम किया। आज हमें पूर्व की भाँति इस अमूल्य वेदवाणी को जानने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि वेद का अमूल्य ज्ञान ही लुप्त हो गया तो जानो कि जो परमात्मा की जो अमूल्य देन है वह हमसे दूर चली जायेगी, इसलिए हमें इस वेद की अमूल्य विद्या को जानने का प्रयत्न करना है। **संसार की जितनी विद्यायें हैं वह सब वेद में बीज अंकुर रूप से विराजमान हैं।** जैसे वट वृक्ष है जिसमें महान् शाखायें भी हैं, नाना प्रकार के पत्र भी हैं परन्तु यह सब बीज में अंकुर रूप से रहते हैं, वह कितना सूक्ष्म है, इसी प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्र में परमात्मा का ज्ञान विज्ञान है। वह एक प्रकार का अंकुर है जिसको जानने के लिए आत्मा के बल को ऊँचा बनाना अनिवार्य है।

मानव जीवन का दिग्दर्शन

आज हमारी वेद वाणी का उच्चारण करने का क्या अभिप्राय था? हमें अपने मानवत्व को पवित्र बनाने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए, विवेक के उस क्षेत्र में जाना चाहिए जिस क्षेत्र में पहुँचकर हम राज्य को पवित्र बना सकें, अपने को पवित्र बना सकें और ऋषि परम्परा को ऊँचा बना सकें। अपने जीवन को पवित्र बना करके हमें उस अन्तरिक्ष

में रमण करना है जिस अन्तरिक्ष में हमारे ऋषि, मुनि और आदि आचार्यजन रमण किया करते थे। आज पुनः से उस अमूल्य वेदों पर पहुँचना है। महाराजा याज्ञवल्क्य, महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र इत्यादि मुनियों का प्रतीक हमारे द्वारा सराहनीय है क्योंकि उसमें ज्ञान की एक अमूल्य निधि है जिससे संसार पवित्र बनता है। हमें उस वेद परम्परा को अपनाना है जिसको अपना करके मुनिवरो ! यहाँ सूक्ष्म से बालक अपने माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हुए वेद के अनुसार अपने ऐश्वर्य को त्यागते हुए और ऋषि परम्परा को पवित्र बना करके संसार से समाप्त हो चुके हैं।

सतोयुग

मुनिवरो ! यहाँ भक्त का भगवान् के प्रति विवेक होना चाहिए, पति और पत्नी में विवेक होना चाहिए, पिता और पुत्र में विवेक होना चाहिए, माता और पुत्र में विवेक होना चाहिए, राजा और प्रजा दोनों में विवेक होना चाहिए। जब विवेक की अमूल्य वेदी पर विराजमान होते हैं तो संसार पवित्र होता है। वह काल सतोयुग कहलाता है जब यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक मेरा भोला आचार्य ऋषि मण्डल इस विवेक की अमूल्य वेदी पर अपने विचारों को नियुक्त करता है। पवित्रत्व में अपने कर्त्तव्य का पालन करता है तो हृदय में विवेक की भावनाएं उत्पन्न होती हैं जिससे यह वायु मण्डल पवित्र होता है तो मानव के जो विचार हैं, जो भी वाक्य वह प्रकट करना चाहता है वह सत्यता में और आनन्दमयता से उसके हृदय में ओत-प्रोत होते हैं।

वाक्य की अवधि

आज हमारा वैज्ञानिक सिद्धान्त कहता है कि अन्तरिक्ष में जो भी वाक्य रमण करता है वह उस काल तक नष्ट नहीं होता जब तक यह प्रकृति अपने स्थल में नहीं चली जाती है। जैसे मुनिवरो ! मानव के कर्मफल के अनुकूल मन का सम्बन्ध रहता है। यह वाक्य अन्तरिक्ष का एक मन माना जाता है और यह वाक्य रमण करता रहता है। जब यह प्रलयकाल हो जाता है तो यह वाक्य अपने सूक्ष्मत्व में चला जाता

है, प्रकृति भी सूक्ष्मत्व में चली जाती है, परमात्मा अपनी महत् सत्ता को अपने में शोषण कर लेता है, संसार की प्रलय हो जाती है। आज हमें उस प्रलयकाल को नहीं विचारना है। हमें संसार में विवेकी बनना है।

राजा और प्रजा का सन्मार्ग

मुनिवरो ! मैं इस विवेक की ही पुनः-पुनः व्याख्या किया करता हूँ परन्तु जब राजा और प्रजा दोनों में विवेक होता है तो राजा अपने कर्त्तव्य का पालन करता है कि मेरी प्रजा में किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं है। जब राजा को प्रजा के प्रति ऐसा विवेक होता है तो प्रजा भी विवेकी बनती है। राजा को शिव बनने की और प्रजा को कैलाश बनने की आवश्यकता है, संसार में विवेक आ जायेगा। शिव किस प्रकार बन सकता है यह राजा और कैलाश किस प्रकार बन सकती है यह प्रजा?

मुनिवरो ! जब ऋषियों की परम्परा को अपनायेंगे और वेद को अपनाते चले जायेंगे जो हमारे द्वारा परमात्मा की देन है, जिससे मानव का हृदय उदार और अपने नाना कर्त्तव्यों का पालन करता हुआ यह मानव समाज विवेक की अमूल्य वेदी पर रमण कर सकता है। जब प्रजा विवेकी बन जायेगी और राजा से कहेगी कि तू विवेकी क्यों नहीं बनता तो राजा कहाँ तक जायेगा। राजा प्रजा दोनों ही तब विवेकी बन सकते हैं जब दोनों में अपने-अपने कर्त्तव्य की भावनाएँ हों। जब कर्त्तव्य की भावनाएँ नष्ट हो जाती हैं तो क्लिष्टता आ जाती है, चरित्र भ्रष्ट हो जाता है और राजा प्रजा दोनों का पतन हो जाता है। राजा प्रजा को दूसरे राष्ट्र अपने अधीन करके उनके विचारों को नष्ट किया करते हैं। जहाँ विचार नष्ट हो जाते हैं वहाँ एक प्रकार की नास्तिकता आ जाती है, मानवत्व समाप्त हो जाता है और एक क्रीड़ात्व बन जाता है।

मानव ! तू कर्त्तव्य की पवित्र वेदी पर आ और अपने कर्त्तव्य का पालन करता हुआ संसार को पवित्र बनाता चला जा 'अग्रणी भूतम् पवित्रे' पवित्राणी कश्मोसी रेवती अग्रिणा 'रेवती मधानः दधास्यते' ऐसा आचार्यों का कथन है कि मानव को हर प्रकार से विवेक की अदृश्य

वेदी पर आ जाना है। जिस समय मुनिवरो ! प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल, प्रत्येक आचार्यजन, राजा और प्रजा सब अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करता है तो उस समय यह संसार सतोयुग कहलाता है। जब वहाँ कर्त्तव्य की विहीनता हो जाती है, विवेक नहीं रहता, मानव का चरित्र भ्रष्ट हो जाता है और जहाँ चरित्र भ्रष्ट हुआ तो राजा-प्रजा दोनों का विवेक समाप्त हो जाता है। **विवेक अपने कर्त्तव्य के पालन करने से आएगा।**

मुनिवरो ! जैसे यज्ञशाला में विराजमान हो करके ब्रह्मा यज्ञ को सम्पन्न करता है, अपने कर्त्तव्य का पालन करता है तो वह उस समय देवताओं का अधिपति माना जाता है। जब अधिपति माना जाता है तो पुरोहित को सुख प्राप्त होता है और उसका आत्मा यजमान के लिए प्रेरणा देता है, इसी प्रकार प्रजा-राजा की अधिपति या राजा-प्रजा का अधिपति बन करके अपने कर्त्तव्य के लिए शुभ कामनाएँ करता है तो उसी का नाम सतोयुग पुरी कहलाता है।

भगवान् शिव

मेरे भोले आचार्यजनो ! आज हमें शिव बनना है। हमारे वैदिक साहित्य में शिव के नाना पर्यायवाची शब्दार्थ हैं। शिव नाम परमात्मा का, शिव नाम राजा का, शिव नाम आत्मा का और शिव नाम सूर्य का परन्तु मुझे यहाँ पर्यायवाची शब्दों की व्याख्या नहीं करनी, केवल वैदिक साहित्य के अनुकूल उच्चारण करना है। विवेक के आंगन में आ जाओ जहाँ विवेक की चर्चा चल रही थी।

बेटा ! परमपिता परमात्मा की कृपा से भगवान् शिव के दर्शन करने का सौभाग्य मिला, जो रावण के गुरु कहलाते थे, राजा हिमाचल की कन्या पार्वती के साथ जिसका सँस्कार हुआ था। मुनिवरो ! कैसे सुन्दर विवेकी रहते थे, एक ही वस्त्र है उसी वस्त्र को लेकर पर्वतों में रमण कर रहे हैं, कैसा सुन्दर भाव, कैसा सुन्दर विवेक है। मुनिवरो ! पर्वत कौन है, जो बहुत ऊँचा हो, जिस राजा के राष्ट्र में ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है उस राजा को शिव कहते हैं और प्रजा को कैलाश

कहते हैं, ऊँचे शिखर वाली प्रजा कैलाश और उसका स्वामी कैलाशपति कहलाता है। राजा-प्रजा दोनों का कर्त्तव्य है कि विवेकी बनें। जब दोनों में विवेक की भावनाएँ होती हैं तो बेटा ! यह संसार पवित्र बनता चला जाता है, आचरण पवित्र रहते हैं, ब्रह्मचर्य रूपी गहना मानव के द्वारा रहता है, आज हम इस गहने को धारण करें।

मानव का भूषण

मेरे प्यारे महानन्द जी आधुनिक काल की चर्चा करते हुए कहा करते हैं कि मानव का स्वर्ण भूषण है परन्तु **मानव का वास्तविक भूषण विवेक है।** जब प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या प्रत्येक ऋषि मण्डल विवेक रूपी गहने को धारण कर लेता है तो संसार में पवित्र कहलाता है, अगस्त्य कहलाता है, विष्णु कहलाता है, शिव कहलाता है, इन्द्र कहलाता है।

माता, पिता और पुत्र का लक्ष्य

बेटा ! यहाँ राजा और प्रजा में विवेक होना चाहिए, माता और पुत्र में विवेक होना चाहिए। जो माता अपने पुत्र का पालन करती है वह माता कहलाती है। पालन करने का अभिप्राय केवल पुत्र उत्पन्न करना ही नहीं है, पालन का अभिप्राय है कि अपने पुत्र में विवेक की भावनाएँ उत्पन्न कर दे जो सर्वज्ञ जीवन उसके मन में अंकित रहे। आज मुझे बेटा! कुछ वैज्ञानिक और आयुर्वेद की चर्चायें स्मरण होती चली आ रही हैं।

मुनिवरो ! जिस समय माता के गर्भ स्थापन होता है उस समय उसका हृदय उदार और पवित्र होना चाहिए। माता के गर्भस्थल में एक कमल स्थान होता है। जैसे कमल की पंखड़ियाँ होती हैं इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में भी पंखडियाँ होती हैं। जब मानो देखो वह एक बिन्दु चला जाता है, आत्मा में प्रविष्ट हो जाता है तो उस काल में वह कमल की जो पंखड़ियाँ हैं बन्द हो जाती हैं और गर्भ परिपक्व होने लगता है। माता को उस समय रस पान करना चाहिये, हर समय मग्न रहना चाहिये।

मुनिवरो ! जिस समय गर्भ **तीन माह का** हो जाये उस समय बालक को विवेकी बनाने के लिए यजन करना है। विवेक सहित ऊँचे पदार्थों को पान करना है। माता-पिता दोनों को बुद्धि की चर्चा करनी है। बुद्धि की चर्चा करते हुए प्राण की चर्चा करनी है और प्राण की चर्चा करते हुए मन की ऊँची कल्पना करनी है। जब तीन माह हो जाते हैं उस समय स्थूल रूप से मन और प्राण की गति उस महा माता के गर्भस्थल में प्रविष्ट हो जाती है।

मुनिवरो ! जब **चार माह** का गर्भाशय हो जाता है उस समय उसके द्वारा अन्तःकरण में कुछ माता-पिता के सँस्कार विराजमान होते हैं और **पंचम माह** में उन चीजों में उज्ज्वल सत्ता आती है। माता की दृष्टि सुन्दर होगी, भाव पवित्र होंगे तो वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुकूल वही भाव बालक की दृष्टि में पहुँचते हैं।

मुनिवरो ! इसी प्रकार **छठा माह** होता है उस समय बालक को बुद्धि प्राप्त होती है। जैसी माता की बुद्धि होती है, और पूर्व जन्म में बालक के सँस्कार होते हैं वैसी बुद्धि उसको प्राप्त होती है। यदि माता की विवेक बुद्धि होगी तो बालक की बुद्धि भी विवेकी बनेगी।

जिस समय **सप्त माह** का गर्भाशय होता है उस समय माता का गर्भाशय परिपक्व हो जाता है। उस माह में वैदिक सिद्धान्त के अनुकूल माता को पवित्र बनना है अपने विचारों को ऊँचा बनाना है, वही विचार बालक के अन्तःकरण में स्थापित हो जाते हैं।

अष्ट माह में बालक को विवेक मिलता है, विवेकी बुद्धि मिलती है, ऋतम्भरा, प्रज्ञा और मेधावी बुद्धि प्राप्त होती है। यह बुद्धि प्राप्त होती है माता से और पूर्व जन्म के संस्कार से।

मुनिवरो ! **नौ माह** के पश्चात् बालक माता के गर्भस्थल से पृथक् हो जाता है। उच्चारण करने का अभिप्राय है कि माता को अपने प्यारे पुत्र को विवेक सहित बनाना है न कि नाना प्रकार के संसार की लौलुपता को ही प्राप्त करना है।

मुनिवरो ! संसार में पति और पत्नी के सँस्कार होने का क्या उद्देश्य है? वेद कहता है कि अभिप्राय केवल एक ही है कि पति और पत्नी को विवेकी सन्तान उत्पन्न करना है, गृह का पालन करना है। वेद के अनुकूल गृहस्थ नियमों पर चलना अनिवार्य है, उससे हमारे द्वारा विवेक, सत्ता, ब्रह्मचर्यता और बलिष्ठता आती है। आज हमें जानना चाहिये कि मानव के द्वारा रोग तब आता है जब उसके द्वारा कुछ क्षीणता हो जाती है जब क्षीणता नहीं होती तो रोग नहीं आता।

मेरे भोले आचार्यजनो ! माता और पुत्र दोनों को विवेकी बनना है। जब माता अपने पुत्र को अपनी लोरियों में रमण कराती है तो आनन्दित हो करके कहती है कि आ मेरे भोले पुत्र ! तू मेरे लोरियों के आनन्द को प्राप्त कर। बालक माता की लोरियों में आनन्द प्राप्त करता है, अपने जीवन को बनाता है, युवा हो जाता है। **युवा होने के पश्चात् माता पिता की सेवा करना पुत्र का कर्त्तव्य है।** मुनिवरो ! वह विवेक द्वारा होनी चाहिए। जब माता और पुत्र दोनों विवेकी बनेंगे तो यह गृहस्थ क्यों न स्वर्ग बनेगा। क्यों न यह संसार स्वर्ग बनेगा जब यहाँ ऋषि परम्परा अपनाई जायेगी।

मुनिवरो ! मुझे स्मरण होता चला जा रहा है जब **महर्षि पारा मुनि की पत्नी रेधनी** ने अपने गर्भस्थल से धुरेन्द्र ऋषि को जन्मा। उस माता का कर्त्तव्य क्या था? गायत्री छन्दों का पाठ और नाना देव पूजा नित्य करना। योग चिन्तन करना, योगाभ्यास करना उस माता का कर्त्तव्य था और महर्षि धुरेन्द्र को जन्म दिया। मुझे स्मरण आता है जब महर्षि धुरेन्द्र विवेक की चर्चायें किया करते थे।

हे मेरी भोली माता ! तू कितनी पवित्र है, परमात्मा ने तुझे अमूल्यतायें दी हैं, आज इन अमूल्यताओं को शान्त न कर। **आज संसार में केवल तेरा एक जीवन ऐसा है जो संसार को पवित्र बनाता है।** हे मेरी भोली माता ! वेद ने तुझे दुर्गा कहा है, तू हमारे दुर्गुणों को शान्त करती है और जब दुर्गुणों को शान्त करती है तो हमारा हृदय

पवित्र होता है, हमें विवेक होता है, राष्ट्र के पुजारी बनते हैं, संसार के पुजारी बनते हैं, वेद के पुजारी बनते हैं, ज्ञान-विज्ञान के पुजारी बनते हैं। माता ! तेरे गर्भ को पवित्र और ऊँचा बनाते हैं।

बेटा ! मुझे ऋषि मुनियों की चर्चायें स्मरण आती हैं तो हृदय और भी गद्गद् हो जाता है। वह **माता कितनी पवित्र होती है** जो अपने गर्भ से महान् वीर पुत्र को जन्म देती है, महान् आत्माओं को जन्म देती है, उन माताओं को धन्य है ! मुनिवरो ! यहाँ भगवान् राम जैसे जन्म लेते हैं। भगवान् राम का जीवन कितना उदार था, मैं उसकी कल चर्चा करूँगा आज समय आज्ञा नहीं दे रहा है परन्तु केवल यह कि उनका हृदय कितना उदार था, हृदय में कितनी विवेकता, कितना त्याग और तपस्या थी। आज हमें त्याग और तपस्या की वेदी पर आ जाना है।

मुनिवरो ! मेरे प्यारे महानन्द जी आधुनिक संसार की चर्चायें करते हुए कहा करते हैं कि आज का संसार क्या है परन्तु मैं इनके प्रश्नों का उत्तरदायी बनते हुए कहा करता हूँ, 'भवनेति गच्छति विश्वम् भवनेति प्रदाः करणति गच्छते क्रीड़ा' जब मानव ऊँची क्रीड़ा करता है तो उस समय संसार पवित्र बनता है और जब यह क्लिष्ट क्रीड़ा करता है तो उस महा अन्धकार में चला जाता है जहाँ प्रकाश का अंकुर भी प्राप्त नहीं होता। यहाँ माता और पुत्र में विवेक होना चाहिये, पति और पत्नी में विवेक होना चाहिए। परमात्मा को साक्षी करते हुए दोनों प्रभु का चिन्तन करें, वेदयज्ञ स्वरूप का चिन्तन हो, ऋषि परम्परा उनके समक्ष हो। उनके द्वारा विवेक आता है, एक दूसरे की अनुमति से वहाँ यथार्थ कार्य किया जाता है वह गृह स्वर्ग कहलाता है। जिस गृह में पत्नी और पति में, माता-पिता और पुत्र में विरोध होता है वह गृह नहीं कहलाता है, वह नरकपुरी कहलाती है। आज हम परमात्मा को साक्षी बना करके, आस्तिक बन करके गायत्राणी छन्दों का चिन्तन करना है और वेद वाणी को विचारना है। यहाँ पति पत्नी में विवेक होना चाहिए, पिता-पुत्र में विवेक होना चाहिए।

मनु महाराज ने कहा है कि जब पुत्र सोलह वर्ष की आयु का हो जाए उस समय पिता का कर्त्तव्य है कि अपने पुत्र से मित्र की रीति से बर्ताव करे, उसको पुत्र नहीं जानना चाहिए और पुत्र में इतना विवेक होना चाहिए, उदार भाव होने चाहिए कि माता-पिता की आज्ञा की परिधि में कर्त्तव्य करना चाहिए। जब मानव एक-दूसरे में बन्धा हुआ होता है, एक दूसरे से सम्बन्ध रखता है जैसे पिता पुत्र का, पति-पत्नी का, प्रजा राजा का, राजा और ब्राह्मण का और ब्राह्मण और भगवान् का एक-दूसरे से इस प्रकार का तारतम्य रहता है तो एक दूसरे के तारतम्य से विचार पवित्र बनते हैं। जहाँ एक दूसरे का भय होता है, लोक लज्जा होती है यह संसार पवित्र बनता है, विवेक आता है।

विवेक उस काल में नहीं आता जब मानव अपने विचारों का स्वतन्त्र बन जाता है। विचार विनिमय होना चाहिए, उसको ज्ञान के अधीन होना चाहिए जैसे परमात्मा के अधीन यह प्रकृति रमण कर रही है, प्रकृति के अधीन यह मानव समाज रमण कर रहा है और रमण करता हुआ विचारों में स्वतन्त्र माना जाता है परन्तु कर्म करने में परतन्त्र माना गया है। इसी प्रकार से अपने विचारों को ज्ञान रूपी अमूल्य प्रकाश में परतन्त्र मानना चाहिए उससे पाप न होगा। जब उससे पाप न होगा तो पाप से उऋण होता चला जाएगा, जीवन पवित्र बनता चला जायेगा।

मेरे भोले आचार्यजनो ! वाक्य उच्चारण करते-करते बहुत दूर चले गये। मनु जी का आदेश चल रहा था कि पिता को अपने पुत्र को सोलह वर्ष की आयु के पश्चात् अपने मित्र के तुल्य मान लेना चाहिए। दोनों में विवेक होता चला जायेगा, एक-दूसरे से प्रीति होती चली जायेगी।

गुरू और शिष्य परम्परा का दर्शन

मुनिवरो ! इसके पश्चात् गुरु और शिष्य को प्रातः काल में गुरु के चरण को स्पर्श करना चाहिए क्योंकि गुरु से विद्या प्राप्त होती है,

गुरु से हमें विवेक मिलता है गुरु हमारा जन्मदाता है। प्रथम हमें माता जन्म देती है द्वितीय जन्म आचार्य देते हैं, आचार्य कुल में जाने से हम द्विज कहलाते हैं। आज हमें उनके चरणों को स्पर्श करना चाहिए, गुरु का अपमान नहीं करना चाहिए। आज मेरे समक्ष वह दृश्य आता है जब महाराजा राम और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों में गुरु शिष्य का सम्बन्ध था। मुझे स्मरण है जब मैं अपने गुरुदेव के चरणों में ओत-प्रोत हुआ करता था। मुनिवरो ! ऋषियों ने जिस विद्या को निगला परन्तु वमन करते ही शिष्य उसे ग्रहण कर लेता। वमन को शिष्य किस प्रकार निगल लेता है आज के संसार ने उसको जाना नहीं।

मुझे मेरे भोले महानन्द जी ने एक समय कहा था कि आज का संसार किस भाव से गुरु की पूजा करता है। गुरु जो कुछ झूठा पदार्थ त्याग देता है उसको वमन नाम करके स्वीकार करता है परन्तु पदार्थ को नहीं, अरे ! गुरुओं ने जिस विद्या को पान किया और शिष्य मण्डल में आकर उसका वमन कर दिया, उस विद्या के वमन को पान करना ही शिष्य का कर्त्तव्य है। जब उस विद्या को निगला जाएगा तो संसार में विवेकता आती चली जाएगी। गुरु की ब्रह्म-विद्या, राष्ट्र-विद्या, सामाजिक-विद्या और वैज्ञानिक-विद्या का पान करना है, इससे आगे चलकर हमारा भविष्य बनेगा, जीवन पवित्र बनता चला जायेगा, मानवता आती चली जायेगी। संसार स्वर्ग बन जायेगा।

मुनिवरो ! आज मुझे वह दृश्य स्मरण है जब यहाँ भगवान् राम गुरु के चरणों में ओत-प्रोत हो करके उनके चरणों को छुआ करते थे और गुरु आशीर्वाद देता 'आयुष्मान् भवाः' हे पुत्र ! तुम आयुष्मान् रहो, तुम्हारी आयु दीर्घ हो। जब यह सुन्दर आशीर्वाद दिया जाता है तो उस शिष्य की आयु दीर्घ होती है, गुरु-शिष्य में विवेक होता है, दोनों में प्रीति होती है। बेटा ! जब इस प्रकार की प्रीति होती है तो क्यों न यह समाज ऊँचा बनेगा, क्यों न यहाँ ब्रह्म-विद्या आयेगी। ब्रह्म-विद्या तब नहीं आती जब यहाँ अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं किया जाता।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने आधुनिक काल की चर्चा करते हुए कहा कि आज यहाँ गुरुओं का अपमान किया जाता है। जब गुरु अपने शिष्य का अपमान करता है या शिष्य गुरु का अपमान करता है तो यह अपमान वाले सँस्कार अन्तरिक्ष में विराजमान हो जाते हैं और संसार में अपवित्रता आ जाती है। आज हमें पवित्र बनना है, अपने विचारों को पवित्र बनाना है, विवेक की वेदी पर रमण करना है। भक्त और भगवान् में विवेक होता है तो विवेक की पवित्र वेला जाग्रत होती है।

महर्षि अगस्त्य के तीन आचमन

मुनिवरो ! मेरे प्यारे महानन्द जी एक लोक-कथा वर्णन किया करते हैं जिसे बारम्बार उच्चारण किया करता हूँ, यह वाक्य मुझे बड़ा सुन्दर लगा करता है। यह कहा करते हैं कि सतोयुग में एक टटीरी समुद्र तट पर रहा करती थी। एक समय समुद्र के जल ने उस टटीरी के दो पुत्र अण्डों को अपने में रमण कर लिया। टटीरी ने सोचा कि इस महान् पापी समुद्र ने मेरे दोनों पुत्रों को अपने में रमण कर लिया है, अब मुझे इसको शान्त करना चाहिए। बेटा ! वह इसको शान्त करने के लिए पृथ्वी के कणों को स्थापित करने लगी। इतने में अगस्त्य मुनि वहाँ आ पहुँचे और टटीरी से पूछा कि यह तू क्या कर रही है? उसने कहा कि इस पापी समुद्र ने मेरे दोनों पुत्रों को अपने में रमण कर लिया है, मैं इसको शान्त करना चाहती हूँ। अगस्त्य मुनि बोले, अरे ! यह तू क्या कर रही है, मैं इस समुद्र को पान किए लेता हूँ। कहते हैं अगस्त्य मुनि ने तीन आचमन किए और तीन आचमनों में समुद्र का शोषण कर लिया, अपनी उपस्थ इन्द्रियों के द्वारा समुद्र को खारी बना करके त्याग दिया और उन दोनों पुत्रों की रक्षा हो गई।

मुनिवरो ! वाक्य तो बड़ा सुन्दर परन्तु तार्किक व दार्शनिक है। महानन्द जी इसकी रूप-रेखा इस प्रकार स्वीकार कर लेते हैं परन्तु अगस्त्य मुनि के दर्शन करने का सौभाग्य मिला है। अरे ! **टटीरी नाम आत्मा का है और आत्मा के मन और बुद्धि दो पुत्र हैं और यह**

संसार रूपी सागर है। इसमें मन और बुद्धि दोनों भ्रमित हो जाते हैं। उस समय आत्मा को कुछ विचार आता है और यह अपने ज्ञान रूपी कणों से इस महान् समुद्र को शान्त करने लगती है। आगे इसमें विवेक उत्पन्न होता है। **हमारे आचार्यों ने विवेक को अगस्त्य कहा है।**

मुनिवरो ! यह संसार वह है जिसमें मन और बुद्धि भ्रमित हो जाती है और भ्रमित हो करके मनुष्य इस संसार रूपी सागर में डुबकियाँ लगाता रहता है। यह संसार वह है जहाँ एक-दूसरे के विचारों को नष्ट किया जाता है, एक-दूसरे को नष्ट करने की भावनाएँ हैं और इसी विचार-विनिमय में अपने मानत्व को समाप्त कर देता है। जन्म-जन्मान्तरों के महान् चक्र में रमण करता रहता है। किसी काल में छुटकारा नहीं मिलता।

मुनिवरो ! हमारे आचार्यों ने कल्पना की है कि टटीरी नाम आत्मा का है, मन और बुद्धि अण्डे दोनों इसके पुत्र हैं, विवेक नाम अगस्त्य का है। **तीन प्रकार के आचमन मुनिवरो ! देखो वेद की विद्या आती है,** ज्ञान कर्म और उपासना इन तीनों विद्याओं का पान करने वाला इस संसार सागर से पार हो सकता है और संसार सागर को खारी बनाकर त्याग देता है। जैसे मनुष्य मधु का पान करता है परन्तु यदि कसैला और महान् खारी उसके द्वारा आ जाता है तो उसको त्याग देता है। इसी प्रकार जब विवेक रूपी अगस्त्य जागृत हो जाता है तो इस संसार रूपी सागर को खारी बनाकर त्याग देता है। यह भक्त और भगवान् दोनों का विवेक है। मुझे महर्षि अगस्त्य के दर्शन करने का सौभाग्य मिला। उनके द्वारा यह तीन आचमन का विवेक था।

प्रभु से याचना

आज मैं पुनः पुनः परमात्मा से याचना किया करता हूँ कि हे परमात्मा ! तू उस माता को संसार में उत्पन्न कर जिसके गर्भ से अगस्त्य मुनि जैसे बालक का जन्म हो। जो वेद की त्रि-विद्या को जानने वाला और इस संसार सागर से पार होने वाला हो। ऐसी आत्मा को संसार

में जन्म दे जिससे संसार में विवेक की भावनाएँ जागृत होती चली जाएँ। विवेक ही राष्ट्र को ऊँचा बनाता है। विवेक ही मानवता लाता है, जब विवेक की भावनाएँ होती हैं तो यह संसार पवित्र होता है।

अब मुनिवरो ! हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, **आज हमारी भक्त और भगवान् की चर्चाएँ चल रही थीं।** भक्त विवेक के सहित यह जानता है कि जहाँ उसकी दृष्टि जाती है, जहाँ मन जाता है, जहाँ बुद्धि का प्रतिबिम्ब जाता है वहीं परमात्मा उसका प्रतीक बना हुआ है, वहीं परमात्मा है। परमात्मा के प्रति उसके द्वारा अनुपम विवेक होता है, अन्त में एक समय वह आता है जब भक्त भगवान् की गोद में विराजमान हो जाता है, परमात्मा के आनन्द को पान करता है। आज हमें उसी आनन्द को पान करना है। यह आनन्द विवेक के द्वारा प्राप्त होगा। विवेक मानव के द्वारा उसी काल में आ सकता है जब मानव परमात्मा का आस्तिक बने। जब मानव में नास्तिकता आएगी तो विवेक मनुष्य से दूर चला जाएगा। **यदि सब अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करते चले जाएंगे तो यह संसार स्वर्ग बन जाएगा, उस समय यह राम-राज्य कहलाएगा।** अब आज का हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा तो कल इससे सुन्दर चर्चाएँ होंगी।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! कल आपका क्या आदेश रहेगा?

बेटा ! कल जैसा समय आएगा, समय के अनुकूल वाक्य उच्चारण किया जाएगा, अब वेद पाठ होगा।

दिनाँक : 18 अक्टूबर, 1964

समय : रात्रि 8.30 बजे

स्थान : मोगा मण्डी, पंजाब

।। ओ३म् ।।

ऋषियों के उद्गार

1. वेद का आदेश है कि हे मानव! तू नर्मता के साथ सबका आदर कर।
2. परमात्मा के बनाये नियम तो अटल हैं। सत्य हैं। तीनों कालों में एक से हैं। परमात्मा की चलायी परम्परा को कोई भी तोड़ नहीं सकता। चाहे महर्षि हों, चाहे योगी हों, चाहे मुनि हों।
3. मनोहर जीवन बनाने के लिये मानव को सुन्दर योजना बनाने की आवश्यकता है।
4. आत्मा को माता के गर्भाशय में जो महानता और शिक्षा प्राप्त हो जाती है वह सर्वांग जीवन भर में मानव प्राप्त नहीं कर सकता।
5. वेदमन्त्र तो यह कहता है कि जो मानव दूसरों को जानना चाहता है वह अपने को जान ले।
6. बिना ज्ञान कोई सुयोग्य नहीं बन सकता।
7. जिस व्रत को धारण करो उसे पूर्णता से करो, जैसे भी नियम बनाओ वे ऐसे पूर्ण जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा पूर्ण कलाओं से युक्त होता है। यही पूर्णिमा का व्रत है।
8. अध्यात्मिक यज्ञ का अर्थ जिसमें हमारी आत्मा का विकास हो।
9. विष्णु ज्ञानी को कहते हैं, जो परमात्मा के गुणों को धारण करने वाला है।
10. परमात्मा से यह सब प्राण आ रहा है, सविता सत्ता आ रही है और यह सविता बन हर प्रकार से लाभ पहुँचा रहे हैं।
11. मानव का उत्थान करने के लिये परमात्मा का बनाया प्रत्येक पदार्थ मानव के जीवन का सूचक है।
12. मानव को अपने धर्म पर दृढ़ रहना चाहिए और मर्यादा में चलना चाहिए। आपत्ति आने पर भी उसे सहना चाहिए।
13. जिसको आप ने दान में दे दिया और उस दान से आप कुछ लेवें, यह आपके योग्य कदापि नहीं।
14. जब स्वार्थ आ जाता है तो उस समय धर्म, मर्यादा समाप्त हो जाती है।
15. बुद्धिमान वह होता है जिसके रोम रोम से सब इन्द्रियों से अमृत की धारा बहती हो।
16. जब वेद का ज्ञान मानव के समक्ष रहता है उस काल में वह सँसार अन्धकार में नहीं जाया करता है।
17. सतोयुग उस काल को कहते हैं जिस काल में वेद की विद्या होती है।

।। ओ३म् ।।

Conception of Yajna

Oh Sages ! once a question was asked to Maharishi Vashistha- "What is the difference between the nation and the yajna?" The great sage replied there is no difference between them. When the nation and yajna are one and the same, evey man, woman, unmarried, Banprasthi and all others lead yajna - pervading life. Husbands and wives remain engaged in performing religious activities. Other worldly affairs are taken up only after recitation of vedic Mantras early in the morning. Nations preferring religious actions (Yajna) are the best nations and the king of such nations deserves to be the sovereign of the world.

Oh Sages ! in the olden times persons usually led yajna pervading life. One of the examples is quoted here - King Harishchandra never uttered a Iie even in dreams. In his kingdom Yajnas were regularly performed. He made up his mind to raise his nation upto the standard of that of Indra's. For that he performed yajnas and when the 99th yajna was to be celebrated, sage Daronjee was selected as head priest (Brahama). The yajna began, and when it was continuing, one night the king in a dream saw a lovely girl and an ascetic. The ascetic said "Oh King - I stand in need of donation from you". The king said "What do you want ?" The sage said, "Give your State to me". The king said, "very well". The girl then asked the king to give her 2-1/ 2 lacs of gold coins. The king at once granted that request too. In the morning the king was anxiously thinking that the whole kingdom has been donated but the receiver has not yet come. Oh sages! in the meantime, Vishwamitra and the girl came and said "Oh king! you have donated your state to me but you have not yet fulfilled your words". The king replied; "Yes I have given my kingdom in a dream to you, you may gladly take it." After that the girl, who was standing behind stepped forward and urged that she too was sanctioned a donation of 2-1/2 lacs of gold

coins." The king said, "Oh lovely girl your demand will also be satisfied". As soon as the king was to pay the amount from his treasury, the sage objected to it pointing out that the king had no right to draw any amount out of the state - treasury as the entire state has already been conferred upon him.

Oh Sages ! the king gave up his kingly position mortgaging him-self, he paid the said amount to the girl, and hence forth he remained serving a Shudra.

This is an ideal example of donation. The world is badly in need of such a great and ideal and truth-loving personage leading his life with such austerity and renunciation.

Oh Son ! I was narrating that we should compose our lives with yajnas. God created our lives to perform yajna, austerity and renunciation in the world, otherwise there is no object for it as all the virtuous deeds are done by the human body only and by no other creature. Among all rituous actions an unattached action is the best. The yajna in which no carnal desire is sought and is performed as duty only satisfies deities.

Come along oh noble preceptors! let us extol the glory of God and pay homage to Him, so that we may attain virtuous positions.

Such inclination towards the yajnas leads us to humanity and we absorb ourselves in moral virtues and sacrifice.

The purpose of to-day's discourse is to prepare priests, yajmans, Brahma and Hota. They are to purify themselves with chastity, they should incline towards pious deeds, consequently they may contemplate over important problems. They should be well - versed in getting performed graceful vajnas ; consequently human heart may be purified. Like king Harishchandra we must be adamant not to tell a lie even in dreams. Lie incurs a great deal of loss.

Oh Sages! Whatever yajnas are to be performed whether ordinary or grand, before executing it think over it well and frame an explicit good plan accordingly. Calling deities, offer oblation

to them. These deities will render a great deal of good to you. Worship the deities with high estimations. So long as we do not render good actions for a deity, he would not gratify us with voice, light and vitality.

Oh Sages ! the fine phase of Yajnas will be described today. Yajna - pervading function of every part of human structure makes a man ideal and enables him to get rid of every disease. Contrary to it, if a man constantly offers impure oblation (unhealthy food), his body would be sick and perish as good food results in good health and intelligence. God has constructed the human body in a very good manner. In this body. earth. water. fire. air. intervening space are all very well adjusted. These elements function simultaneously. If any of them separates itself from the body. the structure would then come to an end.

Oh Sages! in the womb of jewel bearing earth. different kinds of herbs are growing in abundance. There is sublimity in them and they are of universal use. Cattle take them and churning in their machine extricate a substance of which butter is made. How to get that butter out of these herbs directly is a subject of research. I express the views of Vayu Muni Dalbhya and Maharishi Som and others. Collect different sorts of herbs and heat them in eight edged yajna - Vedi. A peculiar gas will appear in that Vedi. The diagnosis and proper use of that gas will be much more effective than ordinary butter. This gas will make the yajnashala sublime. Sitting in Yajnashala under the influence of that gas the yajman's brain becomes so nimble that he can harmonize the sun's rays with his breath and derive conclusions as Vayu Muni describes. Sun rays produce other rays out of them. These rays very much effect Yajman's brain. This is the method which a yogi can devise. It is a part of Yoga.

These sun–rays are rushing in yajnashala by the force of gas produced with yajna, our inhalation and exhalation should be in harmony with sun rays.

In order to attain the ability of the said harmony, Yajik must be well acquanted with the function of mind and air breath

and increase his will - power with their combination. When this ability is achieved, the Yajnik should proceed further.

Sitting in yajshala full of gas produced and spreading, the yajnik should analyse himself and purify his heart and life.

When success in purifying heart and life is achieved. he should continue researching the natural laws (Rit). His position in this world and the other worlds will be maintained to the extent, he achieves success in this research.

The nation. which is fortunate to have such kinds of yajnik priests. yogis, is the best nation as it fully depends upon the dictation of the Supreme Power. Other ordinary persons purify themselves too and become good nationalists. Supreme God showers bliss over such nations. We should pray to God; Oh God! you yourself are a Yajna. Vedas are praising your glory. We stand in need of your kindness to make us sublime and broad minded, and our lives may become Ved-pervading ***(Ved Maye).***"

Oh sages! our recitation of Vedic Mantras was describing spiritual yajna. In this yajna there are three sacrificial woods (Samidhas) of very peculiar types. Inside the forehead there is a very illuminated place which is called Brahm-Randra. This is heaven of human-body. In this Brahm-Randra there are three wonderful nerves which are utilised as three sacrificial woods - Samidhas. One is Suryaketu, the other is Aaruni and the third is Dhruv. With these sacrificial woods the yajnik performs unique yajna.

Oh Son ! when I made up my mind to accomplish this kind of yajna I enjoyed no sleep for 12 years continuously. I took no other thing except some special herbs as food. What is the fire for such an yajna ? The mind with vital force produces a unique fire to light up these three Samidhas. When the three nerves are in the wakeful positions the illuminated **Brahm Randra** becomes still more shining. What is the butter (Ghrit) for this yajna ? It is also very strange. Yogi prepares his mind by taking herbs of extra-ordinary merits constantly. by which his will power gets marvellous strength. This will-power is. utilised

as butter. Yogin offers oblation of butter to the fire. Suryaketu nerve leads the yajik to Suryalok. Nothing in Suryaloka remains unkown to him. The Aruni nerve makes him well acquainted with Aruni Lok. With the help of the third nerve Dhruv Lok is known to him.

Besides these three nerves there are three more nerves existing in Brahma-Randra. Their names are Swan, Anutani and Krati. When a yogin gets all the three nerves awakened, he gets well acquainted with all the three worlds i.e., earth (Prithwil) Intervening (Antriksh Lok) and heaven (Dev Lok).

Oh son! Oh Brahmachari ! if you want to be entitled for this spiritual yajna and through this yajna you want to enjoy other worlds and if you want to know different kinds of physical atoms, you must harmonize your mind and vital force (Pran) and churning both of them extricate peculiar Butter (Ghrit) for oblation,

Oh Son ! who can offer these oblations to perform spiritual yajna ? Only the celibate persons perform this spiritual yajna. Maharishi Bharadwaj used to perform such vajna, Bharigu, Vyas and ShukDev and other ascetics used to offer oblations in this yajna.

Spritualist Vedic sages described four other nerves in the Brahma Randra - Swanti, Premtani, Karatni and Renketu. When these four nerves are in wakeful position they meet those three nerves already described, and Mind and Prana both combined are utilised as Ghrit oblation over them. This Yajna enables yajman to be well acquainted with all the secrets of nature. Further he comes in communion with great souls who roam about from Dev-Lok to this earth freely with subtle bodies.

With this yajna, yajnik can absor sun-rays, can know gaits of air, and he can know the subtle atoms. To such yajnik different sort of Divine herbs disclose their qualitative secrecy and also the method of use.

Pujyapad Gurudev

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

आस्था

श्रीमति ब्रजबाला धर्मपत्नि श्री राजकिशोर त्यागी जी निवासी ग्राम मकनपुर, जिला गाजियाबाद, उ.प्र. ने प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी अपनी प्रिय पौत्री आस्था सुपुत्री श्रीमति अंजलि एवम् श्री हरिओम त्यागी जी के जन्मदिवस की शुभ बेला के आगमन पर 1101 रु. का सात्त्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए प्रदान किया है जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

श्री त्यागी जी व उनकी धर्मपत्नि प्रतिदिन प्रभात बेला में दैनिक अग्निहोत्र काफी लम्बे समय से करते चले आ रहे हैं और उसके पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचनों का स्वाध्याय भी निरन्तर करते हुए अपनी स्थिति को ऊर्ध्वागति प्रदान करने में संलग्न हैं। इसके साथ–साथ प्रत्येक रविवार को अपने गृह पर एक डा. साहब की निशुल्क सेवा में सभी आने वाले मरीजों को अपनी तरफ से फ्री दवाइयों का वितरण करते हुए अपनी प्रवृत्तियों को मानव कल्याण के लिए एक साकार रूप का दर्शन प्रस्तुत कर रहे हैं।

यह परिवार बड़ी उदारता से धार्मिक कार्यों में अपना सहयोग सभी क्षेत्र में बनाए हुए है और विशेषकर पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के कार्यों में श्री गांधी धाम समिति लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत और वैदिक अनुसन्धान समिति, दिल्ली को निरन्तर तन, मन व धन से सहयोग करने में संलग्न हैं।

श्रद्धालु परिवार के सभी सदस्यों को पुनः से आभार प्रकट करते हुए समिति पौत्री के जन्मदिवस की बारम्बार शुभकामनाएं प्रदान करते हुए परिवार के सभी सदस्यों के लिए सुख, शान्ति, दीर्घआयु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	40.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पंच-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 6)	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 7)	80.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 8)	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 9)	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 10)	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 11)	80.00
63.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 12)	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएं	50.00
65.	प्रभु दर्शन	50.00
66.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 13)	80.00
67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

शृङ्गीऋषि वेबसाईट

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा, उत्तर प्रदेश	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश	100 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

सूचना

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) के सभी आजीवन सदस्यों को सूचित किया जाता है कि समिति की साधारण सभा की आगामी बैठक दिनाँक 27 सितम्बर, 2015 को दिन, रविवार को सुबह 11 बजे A-84 मालवीय नगर, नई दिल्ली पर होनी निश्चित हुई है। जिसमें सभी आजीवन सदस्यों को समय पर पहुँचकर भाग लेने के लिए सादर आमन्त्रित किया जाता है। बैठक में निम्न विषयों पर विचार-विमर्श होगा—

1. पिछली साधारण सभा की कार्यवाही की पुष्टि।
2. साहित्य प्रकाशन सम्बन्धी सभी विषयों पर विचार-विमर्श।
3. समिति के पिछले वर्ष के आय व व्यय के ब्यौरे की पुष्टि और अगले वर्ष के आय-व्यय के अनुमानित बजट पर विचार-विमर्श।
4. समिति के संविधान/मैमोरेन्डम ऑफ आर्टिकल ऑफ एसोसिएशन में आवश्यक परिवर्तनों पर विचार विमर्श।
5. नये आजीवन सदस्यों की पुष्टि।
6. अन्य प्रश्न प्रधान जी की अनुमति से।

मन्त्री

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

Website : www.shringirishi.in, Email : contact@shringirishi.in

उद्‌बोधन

हे मानव! तेरे द्वारा ही तो कर्त्तव्यवाद रहता है। तेरा आन्तरिक हृदय जिस वाक्य को उच्चारण कर रहा है शुद्ध और अशुद्ध को विचार रहा है, धर्म और अधर्म को विचारता है वही हृदय तेरा शुद्ध, निर्मल और पवित्र होकर के अहिंसा परमो धर्म और कर्त्तव्यवाद में परणित होता हुआ तेरे राष्ट्र का सुन्दर निर्माणवेत्ता बन जाता है।

परमात्मा ने जो यह सृष्टि रचायी है यह कर्मक्षेत्र है और कर्मक्षेत्र में जो मानव आया है वह कर्म करने के लिए आया है। परन्तु वह कर्म को त्याग करके अकर्म में लग जाता है परमात्मा को त्याग देता है। लेकिन जो परमात्मा के अधीन होकर के कर्म करता है वह यथार्थ कर्म करता हुआ चला जाता है। और जब यह प्रकृति के आवेशों में चला जाता है तो नवीन सृष्टि रचाने लगता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 43 : अंक : 515
अगस्त 2015

मूल्य :
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पञ्जी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 41030481

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2015-17
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2015-2017
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-08-2015
Published on 5th day of the same month

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-08-2015
Published on 5th day of the same month